International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science (IJEMMASSS)
ISSN :2581-9925, Impact Factor: 7.555, Volume 07, No. 02(II), April- June, 2025, pp. 172-178

भोजपुरी–मैथिली लोकगीतों में नारी चेतना का बदलता स्तरः पिछले एक दशक की पड़ताल

नीलम झा[1*] | रितु शर्मा[2]

[1]शोधार्थी, कला, मानविकी एवं सामाजिक विज्ञान संकाय, निर्वाण विश्वविद्यालय, जयपुर, राजस्थान।
[2]सह आचार्य, कला, मानविकी एवं सामाजिक विज्ञान संकाय, निर्वाण विश्वविद्यालय, जयपुर, राजस्थान।

*Corresponding Author: Nilamjha@hotmail.com

सार

यह लेख भोजपुरी और मैथिली लोकगीतों में नारी चेतना के बदलते स्वरूप का विगत एक दशक के परिप्रेक्ष्य में विश्लेषण करता है। लोकगीत जहाँ एक ओर सांस्कृतिक स्मृति और परंपरा के वाहक हैं, वहीं वे सामाजिक संरचनाओं में परिवर्तन और प्रतिरोध के स्वर भी समाहित करते हैं। लेख यह रेखांकित करता है कि कैसे स्त्री अनुभवों, आकांक्षाओं और प्रतिरोधों ने लोकगीतों की प्रकृति को बदला है चाहे वह विवाह गीत हो, विदाई गीत हो या देवी स्तुति। आधुनिक संचार माध्यमों, शैक्षणिक हस्तक्षेपों और युवा पीढ़ी की भागीदारी ने लोकगीतों को नए रूप में पुनर्परिभाषित किया है। इस अध्ययन में यह भी स्पष्ट होता है कि लोकगीतों की भाषा, शैली, प्रतीक और दृष्टिकोण में हुए परिवर्तनों ने नारी चेतना को अधिक आत्मसजग, आत्मनिर्भर और प्रतिरोधशील स्वर प्रदान किया है।

शब्दकोशः *भोजपुरी लोकगीत, मैथिली लोकगीत, नारी चेतना, स्त्री अनुभव, सांस्कृतिक पुनर्पाठ, प्रतिरोध, लोक परंपरा, डिजिटल लोक, नारीवाद, भाषा–शैली।*

प्रस्तावना

भारतीय लोकसंस्कृति में लोकगीत केवल मनोरंजन का माध्यम नहीं, बल्कि सामाजिक चेतना, भावनात्मक अनुभव और सामूहिक स्मृति के संप्रेषण का सशक्त उपकरण रहे हैं। विशेष रूप से भोजपुरी और मैथिली लोकगीतों में स्त्रियों की भूमिका दोहरी रही है। एक ओर वे इन गीतों की रचयिता, गायिका और संरक्षिका रही हैं, तो दूसरी ओर उनके अनुभव, संघर्ष और संवेदनाएं इन गीतों के मूल स्वर को आकार देती रही हैं। यह द्वंद्वात्मक उपस्थिति ही लोकगीतों को जीवंत बनाती है।

भोजपुरी और मैथिली क्षेत्र, जहाँ एक ओर गहरी सांस्कृतिक जड़ें हैं, वहीं स्त्रियों की स्थिति परंपरा और पितृसत्तात्मक संरचना के बीच निरंतर प्रश्नांकित होती रही है। इन समाजों में विवाह, मातृत्व, श्रम, रिश्ते और धार्मिक विश्वास स्त्री के जीवन को आकार देते हैं, और यही सब कुछ लोकगीतों में दिखाई देता है। किंतु पिछले एक दशक में यह चित्र अपेक्षाकृत बदला है। जहाँ पहले लोकगीतों में स्त्री केवल एक पीड़ित पात्र या त्यागमयी छवि में दिखती थी, अब वहाँ वह प्रतिरोध, आत्म–सम्मान, निर्णय और स्वतंत्रता की आवाज़ के रूप में भी प्रकट हो रही है।

डिजिटल मीडिया, शहरीकरण, महिला साक्षरता, स्त्री आंदोलनों और नई पीढ़ी की संवेदनात्मक भागीदारी ने लोकगीतों की परंपरा को एक नई दिशा दी है। अब ये गीत केवल गांव की चौपालों या मांगलिक

अवसरों तक सीमित नहीं हैं, बल्कि वे सोशल मीडिया, शैक्षणिक विमर्श, और सार्वजनिक मंचों पर नए सन्दर्भों में गूंज रहे हैं। इन परिवर्तनों ने लोकगीतों की भाषा, प्रतीक और भाव–भूमि को भी प्रभावित किया है।

यह आलेख इसी संदर्भ में प्रस्तुत है। इसका उद्देश्य यह विश्लेषण करना है कि पिछले दस वर्षों के भीतर भोजपुरी और मैथिली लोकगीतों में नारी चेतना किस प्रकार बदली है, उसका स्वरूप किस तरह अधिक आत्मनिष्ठ और वैचारिक हुआ है, और किस प्रकार यह चेतना सामाजिक रूपांतरण की भूमि तैयार कर रही है। यह अध्ययन पारंपरिक लोकगीतों की आलोचनात्मक समीक्षा के साथ–साथ समकालीन प्रयोगों, मंचों और अभिव्यक्तियों को भी सम्मिलित करता है। साथ ही यह यह प्रश्न भी उठाता है कि क्या यह चेतना केवल अभिजात और शहरी प्रभाव की देन है या यह गांव की स्त्रियों की भी मौन आकांक्षा का स्वर है, जिसे क्या अब अभिव्यक्ति मिली है?

इस भूमिका के माध्यम से यह स्पष्ट हो जाता है कि लोक और स्त्री चेतना का यह संवादकृबाहरी परिवर्तनों के साथ–साथ आंतरिक रूपांतरणों का भी द्योतक है। यही संवाद इस शोध लेख की केंद्रीय धुरी है।

परंपरा और बदलाव के बीच स्त्री स्वर

पिछले एक दशक में भोजपुरी और मैथिली लोकगीतों में जो स्त्री स्वर उभरे हैं, वे केवल सांस्कृतिक पहचान की अभिव्यक्ति नहीं हैं, बल्कि वे उस सामाजिक परिवर्तन के संकेतक हैं जो ग्रामीण स्त्री जीवन की बदलती चेतना से गहरे रूप में जुड़ा है। जहाँ पहले लोकगीतों में स्त्री मुख्यतः द्रवित, समर्पित, सहनशील, और पुरुष पर आश्रित रूप में चित्रित होती थी, वहीं अब वह अपने अनुभव, दुख, प्रतिरोध और आकांक्षाओं के साथ सामने आती है।

परंपरागत गीतों में स्त्री की छवि

परंपरा में स्त्री के लिए लोकगीत उसका भावनात्मक उद्‌गार होते थे। विवाह, विदाई, सोहर, बारहमासा जैसे गीतों में वह अपने दुःख–दर्द को सामाजिक रूप से स्वीकृत भाषा में व्यक्त करती थी। जैसे एक प्राचीन मैथिली विदाई गीत मेंः

''बाबा के आँगन छोड़ब मोर जीय न लागे,
सासु के घर जइब कोना, सब नयका लागे।"

संग्रहः विद्यापति लोकसंघ, मधुबनी, संकलनः 1958।

इस गीत में एक किशोरी अपने परिवेश से उखड़ने की पीड़ा को सरल परंतु सशक्त शब्दों में व्यक्त करती है। यह पीड़ा सामाजिक व्यवस्था का अंग थी, जिसे चुनौती देने का साहस नहीं था।

बदलती चेतना के स्वर

हाल के वर्षों में दर्ज किए गए लोकगीतों में स्त्रियाँ अब इस व्यवस्था को सहती नहीं, बल्कि उसका विरोध करती हैं। उदाहरण के लिए एक आधुनिक भोजपुरी गीत जो नवदंपतियों के बीच संवाद के रूप में रचा गया हैः

''सासु कहेली पतोह समझल घर के लक्ष्मी,
हम कहनी लक्ष्मी हईं, बाकिर नौकरी भी करीं।"

संग्रहः 'नारी स्वर', रामधारी सिंह दिनकर महिला विश्वविद्यालय, 2021।

यह गीत स्पष्ट रूप से पारंपरिक भूमिका और आधुनिक आकांक्षा के बीच संघर्ष को दिखाता है, लेकिन स्वर दबा हुआ नहीं है, बल्कि आत्मविश्वासी है।

मौखिक परंपरा में स्थानांतरित पीड़ा और विरोध

मिथिला और भोजपुर के ग्रामीण क्षेत्रों में मौखिक परंपरा के रूप में जो गीत नई पीढ़ी की महिलाओं ने गाए हैं, उनमें सामूहिक स्वर अधिक दिखाई देता है। जैसे 2017 में दरभंगा के घनश्यामपुर प्रखंड में दर्ज एक सामूहिक गीत में:

''हमरा पिया से प्रेम नाहीं, हम चाहब कि पढ़ाई करब।
गोदी बिठावब किताब, माटी से सपन बनायब।"

संग्रहः डॉ. अंजलि मिश्रा, नारी गीत संग्रहण अभियान, 2018।

यहाँ लड़की विवाह के संस्थान को नकार रही है, शिक्षा और स्वनिर्भरता को प्राथमिकता दे रही है। यह दृष्टिकोण एक पीढ़ीगत बदलाव की ओर इशारा करता है।

कला में आकांक्षा का विस्तार

बीते दशक में मैथिली चित्रकला के समानांतर, गीतों में भी ऐसी स्त्रियाँ दिखने लगी हैं जो केवल सामाजिक भूमिकाएँ नहीं निभा रही, बल्कि अपने भीतर के कलाकार, सोचने वाली नागरिक और निर्णायक व्यक्तित्व को खोज रही हैं। जैसे 2019 में रेकॉर्ड किए गए एक सावनी गीत में:

''घाघरा पहिर के नाचब हम मंच पे,
गीत गाइब बोल के अपने मन के।"

गीतकारः मालती देवी, बेतिया (पश्चिम चम्पारण), संकलनः 'गाँव की आवाज़', 2020।

यहाँ मंच केवल सांस्कृतिक नहीं, सामाजिक प्रतिनिधित्व का मंच भी है।

संप्रेषण के माध्यम में परिवर्तन

पुराने समय में ये गीत केवल घर के भीतर गाए जाते थे, पर अब मोबाइल ऐप्स, यूट्यूब चैनल, और महिला संगीत मंडलियों के माध्यम से इनका प्रसार हो रहा है। इससे स्त्रियों के स्वर पहले की तुलना में अधिक व्यापक और मुखर हो गए हैं। शारदा सिन्हा ने तो नए आयाम ही गढ़े साथ ही कविता यादव, सरिता साहनी जैसी गायिकाओं ने इन गीतों को नई आवाज़ दी है।

नारी चेतना की भाषा और शैली में बदलाव

नई चेतना सिर्फ विषय में नहीं, भाषा में भी स्पष्ट है। पहले जहाँ गीतों में परोक्ष भाषा और प्रतीकों का प्रयोग होता था, अब प्रत्यक्ष संवाद, स्पष्ट नकार और आत्म–पहचान के शब्द बढ़ गए हैं।

सामाजिक आंदोलन, मीडिया और आधुनिकता का प्रभाव

पिछले एक दशक में नारी चेतना के विकास को केवल गीतों के बदलते स्वर में ही नहीं, बल्कि उन व्यापक सामाजिक बदलावों में भी देखा जा सकता है, जिनका प्रभाव सीधे–सीधे लोकगीतों की भावना और प्रस्तुति शैली पर पड़ा है। महिला सशक्तिकरण, लैंगिक समानता, शिक्षा का प्रसार और मीडिया के प्रभाव ने भोजपुरी और मैथिली लोकगीतों को एक नए विमर्श की ओर उन्मुख किया है।

सामाजिक आंदोलन और लोकगीत

2010 के बाद भारत में बलात्कार, दहेज हत्या, और बाल विवाह के खिलाफ जनांदोलन तेज हुए। निर्भया कांड (2012) के बाद जिस तरह से महिलाओं की सुरक्षा, स्वतंत्रता और अधिकारों पर बहस तेज हुई, उसका असर ग्रामीण इलाकों में भी देखने को मिला। बिहार की लोक गायिका नीलम झा द्वारा गाया गया एक गीत विशेष रूप से चर्चा में रहाः

''बिटिया पढ़े ना देव, बाहर जाय ना देव,

फेर कहेलें सुभागिन हउ।

दहेज मांगले, मारले, जइसे गाय बंधावले।"

यह गीत इंटरनेट पर वायरल हुआ था और इसे बेतिया महिला जनचेतना मंच ने रचा और प्रस्तुत किया। इसमें स्पष्ट है कि गीत अब केवल परंपरा का अंग नहीं, बल्कि सामाजिक जागरण का माध्यम बन चुके हैं।

मीडिया का प्रभाव

टीवी, रेडियो और इंटरनेट ने लोकगीतों को गाँव की चौपाल से निकाल कर वैश्विक मंच पर पहुँचा दिया है। अब लोकगीतों की रचना न केवल मौखिक परंपरा से होती है, बल्कि उन्हें स्क्रिप्ट किया जाता है, रिकॉर्ड किया जाता है और व्यावसायिक रूप से प्रस्तुत किया जाता है। दूरदर्शन बिहार और ऑल इंडिया रेडियो दरभंगा जैसे प्लेटफॉर्म पर महिलाओं द्वारा गाए गए आधुनिक चेतना से लैस गीतों को 2020 के बाद से अधिक स्थान मिलने लगा है।

''लोक स्वर" नामक एक यूट्यूब चैनल, जिसे संगीता चौधरी संचालित करती हैं, 2021 में जारी किए गए एक गीत में कहती हैंः

''हम पढ़ल लेखिका हईं, धरती के बेटी,

चुप्पी तोड़ब, नयका इतिहास बनइब।"

यह चेतना अब केवल ग्रामीण स्त्रियों तक सीमित नहीं रही, बल्कि शहरी मध्यमवर्गीय महिलाओं तक भी फैल गई है जो अपनी सांस्कृतिक जड़ों को बचाते हुए आधुनिक भाषा में अपनी बात कह रही हैं।

शिक्षा और स्वावलंबन का प्रभाव

शिक्षा ने नारी चेतना को सबसे अधिक गहराई दी है। उदाहरण के लिए 2015 के बाद से मिथिला और भोजपुर क्षेत्र के कई कॉलेजों में छात्राओं द्वारा नारी मुद्दों पर आधारित गीतों की प्रस्तुतियाँ होने लगीं। ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा के छात्र समूह ने एक नाटकनुमा गीत में गायाः

''कलम से बदलब दुनिया,

ना रहब अब चूल्हा–चौका तक।

लोकगीत हमरो हथियार,

चेतना के स्वर–शंख।"

यह प्रयोग बताता है कि लोक परंपरा और शैक्षिक चेतना अब समांतर नहीं, बल्कि एक–दूसरे को समृद्ध कर रहे हैं।

नारीवादी संगठनों और छळ८ का हस्तक्षेपः

ठपींत और श्रींतींदक में काम कर रहे संगठनों जैसे जननी सेवा संस्थान, महिला चेतना मंच, च्त्।क्।छ, और साक्षी ने लोकगीतों के माध्यम से जागरूकता अभियान चलाए हैं। इन अभियानों में स्त्रियों को अपने अधिकारों के प्रति सचेत करने के लिए स्थानीय बोलियों में गीत रचने के लिए प्रेरित किया गया।

एक गीत जो 2018 में साक्षी संस्था ने भोजपुर के शाहाबाद क्षेत्र में महिलाओं से रचवायाः

''धकधक करेला करेजा, जइसे पुलिसिया चिट्ठी,

हम ना डरब अब, कानून ह हमार सखी।"

इस गीत में कानून, सुरक्षा, और आत्मबल का जो संगम है वह परंपरागत स्त्री छवि से बिल्कुल भिन्न है।

गीतों में प्रतिरोध, एजेंसी और सांस्कृतिक पुनर्पाठ

लोकगीतों में प्रतिरोध का स्वर कोई नई बात नहीं, परंतु पिछले एक दशक में यह स्वर पहले से अधिक मुखर, स्पष्ट और वैचारिक हो गया है। परंपरा में छिपा हुआ जो प्रतिरोध पहले व्यंग्य, शोक या करुणा के सहारे व्यक्त होता था, वह अब सीधे प्रश्न करता है, टकराता है और विकल्प प्रस्तुत करता है। नारी अब लोकगीतों में केवल पीड़िता नहीं, परिवर्तन की वाहिका भी बन चुकी है।

प्रतिरोध का बदलता तेवर

मैथिली क्षेत्र की गायिका शशिकला झा ने 2017 में एक मंचीय प्रस्तुति में गायाः

''हम जनि बसुं चूल्हा–चौका में,
हमरो सपना छथि चान सन उज्जर।"

यह रचना उनके एल्बम ''नारी स्वर'' (प्रकाशितः मधुबनी संगीत केंद्र) का हिस्सा थी, जिसे युवा महिला कवयित्रियों के सहयोग से तैयार किया गया था। इसमें स्त्रियाँ अब परंपरा को चुनौती नहीं, संवाद में बदलने लगी हैं।

एजेंसी और निर्णय की क्षमता का उदय

भोजपुरी लोकगीतों में 'एजेंसी' यानी स्त्री के निर्णय लेने की क्षमता का स्वर पहले कभी–कभी प्रतीकों में मिलता था। लेकिन अब स्पष्ट रूप से सामने आ रहा है। भोजपुरी गायिका मालविका मिश्रा द्वारा 2022 में गाया गया गीत इसका उदाहरण हैः

''माई कहलीं बिटिया, रह जो घर में
हम कहनीं अब घर दुनिया बनइब।"

यह पंक्तियाँ केवल प्रतीकात्मक न होकर सामाजिक यथार्थ की घोषणा हैं। यह नारी अब निर्णयकर्ता है, आश्रिता नहीं।

पुनर्पाठ की प्रक्रिया

नारी चेतना के बदलते स्वर में 'पुनर्पाठ' की भूमिका अहम है यानी उन पारंपरिक गीतों को नए दृष्टिकोण से देखना और पुनर्सृजन करना। उदाहरण के लिए पारंपरिक 'सोहर' गीतों में बेटे के जन्म की खुशी और बेटी पर मौन अक्सर देखा गया है। लेकिन पिछले एक दशक में इसे चुनौती मिल रही है।

2020 में डॉ. मालिनी ठाकुर के संपादन में प्रकाशित पुस्तक ''भोजपुरी और मैथिली लोकगीतों का स्त्री पुनर्पाठ" में दर्ज एक रचनाः

''बिटिया भइल त फुलवारी मुसकइल,
लक्ष्मी अइली, घरवा धन्य भइल।"

यह गीत उसी लोकधुन में है, पर दृष्टिकोण बदला है। यह पुनर्पाठ महिलाओं की सांस्कृतिक एजेंसी को पुष्ट करता है।

संवेदनाओं की बहुरंगी प्रस्तुति

अब गीतों में गुस्सा, जिज्ञासा, सवाल, आकांक्षा सभी मिलते हैं। जहाँ पहले प्रेम और पीड़ा प्रमुख थी, वहाँ अब शिक्षा, आत्मनिर्भरता, सरकारी योजनाओं में भागीदारी, वोट देने की चेतना भी दर्ज हो रही है।

उदाहरण के लिए, 2023 में छपरा जिले में चुनाव जागरूकता अभियान में शामिल एक गीतः

''हमरो वोट के मोल बा बाबू,
कहिया ले बोलबू झूठ।
अबकी बार हम वोट देब,
जे बेटी के देई छूट।"

यह गीत प्रशासनिक प्रयास का हिस्सा था लेकिन इसके बोल जनता की चेतना से ही निकले थे लोक भाषा में अधिकार की घोषणा।

युवा पीढ़ी, भाषा–शैली और वैचारिक हस्तांतरण

पिछले एक दशक में लोकगीतों की भाषा और शैली में जितना परिवर्तन आया है, उससे कहीं अधिक परिवर्तन उसकी विचारधारा के हस्तांतरण में दिखाई देता है। युवा पीढ़ी अब लोकगीतों को केवल स्मृति या परंपरा के अभिलेख के रूप में नहीं देखती, बल्कि उन्हें नए अर्थों, मंचों और मीडिया में रूपांतरित कर प्रस्तुत कर रही है।

- **लोकधुन और नई संवेदना**

मैथिली क्षेत्र के कलाकार प्रवेश मिश्रा और सोनाली कुमारी द्वारा प्रस्तुत आधुनिक 'कजरी' गीतों में महिला प्रेम की जिजीविषा के साथ ही आज की स्वतंत्र सोच दिखाई देती है। वे पारंपरिक धुनों में गाते हैं, पर बोल होते हैंः

''ना तोहर घर में अइब हम,
ना मोर अस्मिता के दाम घटे।"

यह पंक्ति एक स्त्री के आत्माभिमान और सीमाओं की उद्घोषणा है।

- **डिजिटल माध्यम और विस्तार**

यूट्यूब, इंस्टाग्राम रील्स, फेसबुक वीडियो जैसे माध्यमों पर हजारों स्त्रियाँ अपने स्वर में परंपरागत लोकगीत गा रही हैं, लेकिन उनमें 'स्व' की मुखर उपस्थिति है। 2021–24 के दौरान दर्जनों ऐसे चैनल उभरे जिनमें ''नारी केंद्रित" लोकगीतों को प्रस्तुत किया गया उदाहरणस्वरूप, ''लोक स्वरांजलि'', ''मिथिला रागिनी'' और ''बोल भोजपुरी बोल'' जैसे पेज।

- **भाषा की संकरता और प्रतीकों की नवीनता**

अब मैथिली और भोजपुरी लोकगीतों में हिन्दी, अंग्रेज़ी और इंटरनेट–स्लैंग भी झलकने लगे हैं, जिससे यह स्पष्ट होता है कि भाषा अब स्थिर नहीं रही। उदाहरणः

''पिया गेला मोरा ऑफिस काम से,
व्हाट्सएप पर भेजले प्यार के इमोजी।"

यह शैली भले ही पारंपरिक लगती हो, लेकिन यह एक नई पीढ़ी की अभिव्यक्ति है, जिसमें लोक भी है और टेक्नो–युग भी।

- **पीढ़ियों के बीच चेतना का पुल**

अब दादी–नानी के गाए गीत युवा लड़कियाँ मंचों पर गा रही हैं, पर वे उनमें नए बोल जोड़ रही हैं। यह बदलाव केवल संगीत में नहीं, विचार में भी हो रहा है। लोकगीतों की पंक्तियों के साथ युवा स्त्रियाँ प्रश्न कर रही हैं 'क्यों बहू को ही पराया कहा गया?', 'क्यों बेटी के लिए दुख के गीत?'

- **शैक्षणिक पाठ्यक्रम में लोकगीत**

बिहार और झारखंड के कई विश्वविद्यालयों में अब मैथिली और भोजपुरी लोक साहित्य को औपचारिक पाठ्यक्रम का हिस्सा बनाया गया है। 2022 में ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, वीर कुंवर सिंह विश्वविद्यालय और पटना विश्वविद्यालय ने नारी चेतना को केंद्र में रखकर लोकगीतों पर शोध प्रबंधों को अनुमोदन दिया। इससे इस परंपरा का अकादमिक पुनर्मूल्यांकन भी हुआ।

निष्कर्ष

लोकगीतों की परंपरा समय के साथ न तो समाप्त होती है और न स्थिर रहती है; वह बदलती है, रूपांतरित होती है, और अपने समय की आवाज़ बनती है। पिछले एक दशक में यह स्पष्ट रूप से देखा गया है कि भोजपुरी और मैथिली लोकगीतों में स्त्री केवल गाने वाली नहीं, बल्कि सामाजिक विमर्श की वाहक बन चुकी है। वह अब पीड़ा में गाने वाली छवि से आगे बढ़कर अपनी चेतना, अधिकार, निर्णय और स्वत्व के लिए गीत रचती है।

इस अवधि में लोकगीतों में स्त्रीवादी दृष्टिकोण अधिक सघन हुआ है। युवा पीढ़ी, सोशल मीडिया और अकादमिक दुनिया ने मिलकर इस परंपरा को पुनर्जागृत किया है, जिससे न केवल गीतों की प्रस्तुति बदली है बल्कि उनके कथ्य और सरोकार भी। स्त्री अब लोक में परंपरा की वाहक नहीं, परिवर्तन की उत्प्रेरक बन गई है।

अतः यह शोध इस ओर संकेत करता है कि लोकगीतों का भविष्य केवल संरक्षण में नहीं, बल्कि संवाद, पुनर्पाठ और रचनात्मक हस्तक्षेप में निहित है। इन गीतों के माध्यम से स्त्री विमर्श की नई संभावनाएं उभर रही हैं, सार्थक, समकालीन और सशक्त।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. ठाकुर, मालिनी (2020). भोजपुरी और मैथिली लोकगीतों का स्त्री पुनर्पाठ. *संस्कृति प्रकाशन, वाराणसी.*
2. झा, उषा (2009). लोकगीतों में मिथिला की स्त्री. *प्रभात पब्लिशिंग, पटना.*
3. सिंह, अणिमा (2024). मैथिली लोकगीत. *विद्यापति संस्कृति संस्थान, दरभंगा.*
4. झा, रामदेव (1982). मैथिली लोकसाहित्यः स्वरूप और सौंदर्य. *भारती भवन, मुजफ्फरपुर.*
5. श्रीश, दुर्गानाथ झा (1991). मैथिली साहित्यिक इतिहास. *मिथिला ग्रंथालय, समस्तीपुर.*
6. मिश्रा, मालविका (2022). नारी स्वर (संगीत एल्बम). *संगीत केंद्र, मधुबनी.*
7. Various Online Sources and Field Recordings (2021–2024): YouTube Channels – लोक स्वरांजलि, बोल भोजपुरी बोल, मिथिला रागिनी.

❖◆❖